

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 57 — सत्राजित का वध

5 October 2026



जिस मणि के कारण प्रभु पर कभी मिथ्या कलंक लगा था, उसी के लिए अब एक हत्या होती है; किन्तु जब श्रीकृष्ण बन्धुओं के समक्ष स्यमन्तक खोलकर दिखाते हैं, तब हर दाग धुल जाता है और वह रत्न फिर एक भक्त की धरोहर बन जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध का यह सत्तावनवाँ अध्याय स्यमन्तक की कथा को उसके दुःखद और फिर प्रकाशमय अन्त तक ले जाता है: श्रीकृष्ण की अनुपस्थिति में सत्राजित की हत्या होती है, और प्रभु रत्न को सबके सामने लाकर अपने ऊपर से हर छाया हटा देते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 57 (सप्तपञ्चाशत्तम अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: सत्राजित का वध और मणि की वापसी
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: हस्तिनापुर, द्वारका और मिथिला का उपवन
- केंद्रीय विषय: शतधन्वा द्वारा सत्राजित का वध; कृष्ण-बलराम का पीछा; बलराम का मिथिला-वास; अक्रूर की वापसी और स्यमन्तक का प्रकट होना
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 1-42
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

छप्पनवें अध्याय में सूर्यदेव का दिया स्यमन्तक मणि सत्राजित के भाई प्रसेन के साथ खो गया, और सत्राजित ने यह बात फैलने दी कि कृष्ण ने उसे ले लिया है। प्रभु ने जाम्बवान की गुफा से मणि पाया, जाम्बवती से विवाह किया और सभा में मणि सत्राजित को लौटा दिया; लज्जित सत्राजित ने पुत्री सत्यभामा कृष्ण को दी, और मणि उसी के पास रहा।

श्रीकृष्ण हस्तिनापुर जाते हैं

शुकदेवजी ने कथा आगे बढ़ाई। समाचार आया कि पाण्डव और माता कुन्ती लाक्षागृह में जलकर मर गए। गोविन्द सत्य जानते थे — पाण्डव सकुशल बच निकले थे — फिर भी कुल-धर्म का मान रखते हुए वे बलराम के साथ कुरुओं के राज्य में परिवार को सान्त्वना देने गए। वहाँ भीष्म, कृप, विदुर, गान्धारी और द्रोण से मिलकर उन्होंने उनके शोक में सहभागी होकर दुःख से कहा, ‘अहो, कितना कष्ट है।’

सत्राजित के विरुद्ध षडयन्त्र

कृष्ण की अनुपस्थिति ने पुराने द्वेषों को अवसर दे दिया। अक्रूर और कृतवर्मा ने शतधन्वा से कहा कि अब मणि क्यों न छीन ली जाए, और जिस सत्राजित ने कन्यारत्न देने का वचन देकर भी उनकी उपेक्षा कर उसे कृष्ण को दे दिया, वह अपने भाई प्रसेन की गति क्यों न पाए। उनके शब्दों को तैयार हृदय मिल गया। दुष्ट और लोभी शतधन्वा ने, जिसकी आयु क्षीण हो चुकी थी, सोते सत्राजित को मार डाला; घर की स्त्रियाँ अनाथ-सी विलाप करती रहीं, और वह स्यमन्तक लेकर चला गया।

सत्यभामा का शोक

पिता को मरा देखकर सत्यभामा ‘हा तात, हा तात, मैं मारी गई’ कहकर करुण विलाप करने लगीं और बार-बार मूर्च्छित होती रहीं। फिर पिता के शरीर को तेल से भरे कुण्ड में रखवाकर वे शोकातुर राजकुमारी हस्तिनापुर पहुँचीं और कृष्ण को सब बताया — यद्यपि सर्वज्ञ प्रभु पहले से जानते थे।

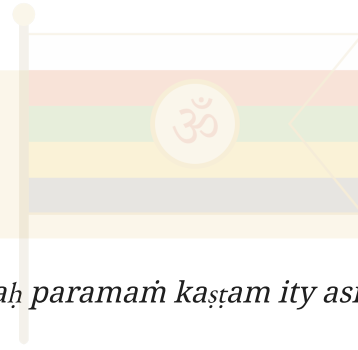


सत्यभामा पिता की मृत्यु का समाचार लेकर हस्तिनापुर पहुँचती हैं; सबके स्वामी होकर भी मनुष्यों के बीच चलने वाले कृष्ण और बलराम इस आघात पर अश्रु बहाते हैं।

सबके स्वामी होकर भी मनुष्यों के बीच मनुष्य की भाँति चलने वाले दोनों भाइयों की आँखें भर आई, और उन्होंने इस भारी आघात पर शोक प्रकट किया।

तदाकर्ण्येश्वरौ राजन्ननुसृत्य नृलोकताम् ।

अहो नः परमं कष्टमित्यस्राक्षौ विलेपतुः ॥ ९ ॥



tadākarṇyēśvarau rājann anusṛtya nṛ-lokatām aho naḥ paramaṁ kaṣṭam ity asrākṣau vilepatuḥ

अर्थ: हे राजन्, यह सुनकर दोनों ईश्वरों ने मनुष्य-लोक की रीति का अनुसरण करते हुए अश्रुपूर्ण नेत्रों से विलाप किया — ‘अहो, हम पर बड़ा भारी कष्ट आ पड़ा।’ (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 9)

इसके बाद प्रभु अपनी पत्नी और बड़े भाई के साथ तुरन्त द्वारका लौटे और शतधन्वा को मारकर मणि वापस लेने की तैयारी करने लगे।

शतधन्वा सहायता माँगता है और ठुकराया जाता है

कृष्ण का संकल्प जानकर शतधन्वा प्राणों के भय से पहले कृतवर्मा के पास दौड़ा। किन्तु जिसने षड्यन्त्र फुसफुसाया था, वह उसके पीछे खड़ा न हुआ। उसने कहा कि वह दोनों दिव्य भाइयों का अपमान करने का साहस नहीं कर सकता, क्योंकि उनका अहित करने वाले को कभी शान्ति नहीं मिली; कंस अनुचरों सहित उनसे वैर में नष्ट हुआ, और जरासन्ध सत्रह युद्धों से रथहीन होकर भागा।

नाहमीश्वरयोः कुर्यां हेलनं रामकृष्णयोः ।

को नु क्षेमाय कल्पेत तयोर्वृजिनमाचरन् ॥ १२ ॥

nāham īśvarayoḥ kuryām helanaṁ rāma-kṛṣṇayoḥ ko nu kṣemāya kalpeta tayor vṛjinam ācaran

अर्थ: मैं दोनों ईश्वरों — राम और कृष्ण — की अवहेलना नहीं करूँगा। उनके प्रति अपराध करके भला कौन कुशल की आशा रख सकता है? (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 12)

वहाँ से निराश शतधन्वा अक्रूर के पास गया — और अक्रूर का उत्तर अस्वीकार से उठकर स्तुति बन गया। दोनों प्रभुओं का बल जानकर कौन उनके विरुद्ध खड़ा हो? कृष्ण विश्व की सृष्टि, पालन और संहार खेल-खेल में करते हैं; उनकी माया से मोहित लोकस्रष्टा भी उनकी चेष्टा नहीं समझ पाते; सात वर्ष के बालक रूप में उन्होंने पर्वत उखाड़कर एक हाथ पर वैसे उठा लिया जैसे बालक छत्रक उठा लेता है।

नमस्तस्मै भगवते कृष्णायाद्भुतकर्मणे ।

अनन्तायादिभूताय कूटस्थायात्मने नमः ॥ १७ ॥

namas tasmai bhagavate kṛṣṇāyādbhuta-karmaṇe anantāyādi-bhūtāya kūṭa-sthāyātmane namaḥ

अर्थ: उन अद्भुत कर्म करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण को नमस्कार; अनन्त, आदिभूत और कूटस्थ आत्मस्वरूप उन प्रभु को नमस्कार। (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 17)

जिन्होंने अपराध के लिए उकसाया था, वे जानते थे कि वे किससे उलझ रहे हैं; उनका भय और उनकी स्तुति दोनों स्वीकार करते हैं कि प्रभु की शक्ति पर सन्देह न था, केवल आज्ञा मानने की इच्छा न थी। दोनों से ठुकराया गया शतधन्वा मणि अक्रूर के पास धरोहर रखकर, एक ही यात्रा में सौ योजन पार करने वाले घोड़े पर द्वारका से भाग निकला।

पीछा और लुप्त मणि

बलराम और कृष्ण गरुड़ध्वज से सुशोभित, असाधारण वेग वाले चार घोड़ों से जुते अपने रथ पर चढ़े और अपने श्वशुर के हत्यारे के पीछे चल पड़े।

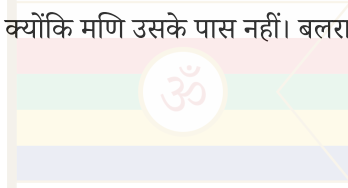


असाधारण वेग वाले चार घोड़ों से जुते गरुडध्वज रथ पर बलराम और कृष्ण अपने श्वशुर के हत्यारे का पीछा करते हैं।

मिथिला के बाहर एक उपवन में शतधन्वा का घोड़ा थककर गिर पड़ा। भयभीत होकर वह पैदल भागा, और कृष्ण ने भी पैदल शत्रु के प्रति न्याय रखते हुए पैदल ही उसका पीछा किया और अपने तीखे चक्र से उसका सिर काट दिया। फिर प्रभु ने उसके वस्त्रों में मणि ढूँढ़ा — किन्तु वह नहीं मिला। रथ पर लौटकर उन्होंने बड़े भाई से कहा कि शतधन्वा का वध व्यर्थ गया, क्योंकि मणि उसके पास नहीं। बलराम ने कहा कि मणि अवश्य द्वारका में किसी के पास रखा होगा, इसलिए कृष्ण लौटकर उसे खोजें।

मिथिला में बलराम और शोकाकुल परिवार को सान्त्वना

बलराम स्वयं अपने प्रिय मित्र विदेहराज से मिलना चाहते थे, इसलिए वे मिथिला में प्रविष्ट हुए। राजा आनन्द से तुरन्त उठे और शास्त्रविधि से उचित उपहारों सहित उनकी पूजा की; महात्मा जनक द्वारा सम्मानित बलराम कई वर्ष वहाँ रहे, और उसी अवधि में धृतराष्ट्र-पुत्र सुयोधन ने उनके चरणों में गदा-युद्ध सीखा।





मिथिला में प्रसन्न विदेहराज उठकर उचित उपहारों से बलराम की पूजा करते हैं; प्रभु वहाँ कई वर्ष रहते हैं और सुयोधन उनके चरणों में गदा-युद्ध सीखता है।

इधर कृष्ण द्वारका पहुँचे और सत्यभामा को बताया कि शतधन्वा मारा तो गया, पर मणि नहीं मिला — वे उन्हें यह सान्त्वना देना चाहते थे कि पिता का हत्यारा अब नहीं रहा। फिर बन्धुओं के साथ उन्होंने सत्राजित की वे सब और्ध्वदैहिक क्रियाएँ करवाई जो परलोक में आत्मा का कल्याण करती हैं।

अक्रूर का पलायन और द्वारका के अपशकुन

शतधन्वा के वध का समाचार सुनकर अक्रूर और कृतवर्मा भय से द्वारका छोड़कर चले गए। कुछ लोग कहते हैं कि अक्रूर के जाने के बाद से नगरवासियों को अपशकुन दिखने लगे, और दैविक तथा भौतिक, शारीरिक और मानसिक कष्ट उन्हें बार-बार सताने लगे। किन्तु शुकदेवजी ने परीक्षित के सामने बात स्पष्ट की: जो ऐसा कहते हैं, वे पहले कही गई बात भूल गए हैं। जहाँ स्वयं प्रभु रहते हों — जो उन मुनियों के आश्रय हैं जिनकी उपस्थिति मात्र से अमंगल दूर हो जाता है — वहाँ अपशकुन कैसे दिखें?

इत्यङ्गोपदिशन्त्येके विस्मृत्य प्रागुदाहृतम् ।

मुनिवासनिवासे किं घटेतारिष्टदर्शनम् ॥ ३१ ॥

ity aṅgopadiśanty eke vismṛtya prāg udāhṛtam muni-vāsa-nivāse kiṁ ghaṭetāriṣṭa-darśanam

अर्थ: हे प्रिय राजन्, इस प्रकार कुछ लोग पूर्वकथित बात को भुलाकर उपदेश करते हैं; जो मुनियों के वासस्थान हैं, उन प्रभु के निवास में अरिष्ट-दर्शन भला कैसे सम्भव है? (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 31)

फिर भी द्वारका के वृद्धजनों ने एक पुराना इतिहास स्मरण किया। एक बार जब इन्द्र ने काशी में वर्षा रोक दी, तब वहाँ के राजा ने नगर में आए अक्रूर के पिता श्वफल्क को अपनी पुत्री गान्दिनी ब्याह दी, और वर्षा हुई। अक्रूर को, वे बोले, वही गुण विरासत में मिला है।

तत्सुतस्तत्प्रभावोऽसावक्रूरो यत्र यत्र ह ।

देवोऽभिवर्षते तत्र नोपतापा न मारिकाः ॥ ३३ ॥

tat-sutas tat-prabhāvo 'sāv akrūro yatra yatra ha devo 'bhivarṣate tatra nopatāpā na mārīkāḥ

अर्थ: उन्हीं श्वफल्क के पुत्र अक्रूर में भी वही प्रभाव है — जहाँ-जहाँ वे रहते हैं, वहाँ इन्द्र वर्षा करते हैं, और वहाँ न तो कोई पीड़ा होती है, न महामारी। (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 33)

वृद्धों की बात सुनकर, और यह जानते हुए भी कि नगर के कष्टों का एकमात्र कारण अक्रूर की अनुपस्थिति नहीं है, कृष्ण ने उन्हें सम्मानपूर्वक बुलवाया और उनसे बात की।

मणि प्रकट होता है

सर्वज्ञ और सबके मन को जानने वाले प्रभु ने अक्रूर का आदर किया, प्रिय वार्ता की, और फिर मुस्कराते हुए मूल विषय पर आए। उन्होंने कहा कि यह उन्हें पहले से ज्ञात है कि शतधन्वा ने तेजस्वी स्यमन्तक दानपति अक्रूर के पास धरोहर रखा है। सत्राजित के पुत्र नहीं था, इसलिए उसकी पुत्री सत्यभामा के पुत्र ही उसे जल और पिण्ड दें, ऋण चुकाएँ और शेष सम्पत्ति पाएँ।

तथापि दुर्धरस्त्वन्यैस्त्वय्यास्तां सुव्रते मणिः ।

किन्तु मामग्रजः सम्यङ् न प्रत्येति मणिं प्रति ॥ ३८ ॥

tathāpi durdharas tv anyais tvayy āstāṁ su-vrate maṇiḥ kintu mām agrajaḥ samyaṁ na pratyeti maṇim prati

अर्थ: तथापि हे सुव्रत, यह मणि तुम्हारे ही पास रहे, क्योंकि दूसरों के लिए इसे सँभालना कठिन है; किन्तु मेरे बड़े भाई मणि के विषय में मुझ पर पूरा विश्वास नहीं करते। (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 38)

अतः, प्रभु ने आगे कहा, अक्रूर मणि दिखाकर बन्धुओं को शान्ति दें; और मन्द मुस्कान से जोड़ा कि इन दिनों अक्रूर के यज्ञ सोने की वेदियों पर अविराम चल रहे हैं — ऐसी समृद्धि जिसकी व्याख्या केवल स्यमन्तक कर सकता है। इन मधुर वचनों से जीते गए अक्रूर वस्त्र में लिपटा, सूर्य-सा दमकता मणि लाकर प्रभु के सामने रख गए।



प्रभु के मधुर वचनों से जीते गए अक्रूर वस्त्र में लिपटा सूर्य-सा दमकता स्यमन्तक लाते हैं, जबकि उनके यज्ञ सोने की वेदियों पर चलते रहते हैं।

कृष्ण ने स्यमन्तक अपने बन्धुओं को दिखाया, और उस एक दर्शन से उन पर लगा कलंक पुँछ गया; फिर उन्होंने मणि अक्रूर को लौटा दिया।

जो प्रभु सम्बन्ध और विजय के हर अधिकार से उस मणि को अपना बना सकते थे, उन्होंने उसे फिर क्यों दे दिया? क्योंकि वह रत्न कभी उनकी चाह था ही नहीं। जिस क्षण कलंक उठा, उसी क्षण से कृष्ण की सारी चिन्ता यही थी कि अपने लोगों के सामने उनका नाम निर्मल हो और सारा प्रसंग धर्म में सुलझे — मृतक का सम्मान, उत्तराधिकारियों की व्यवस्था, बलराम के सन्देह का निवारण, और एक दृढ़व्रती भक्त को उस वस्तु का विश्वास जिसे और कोई सँभाल न सके। सब लोकों के स्वामी केवल निर्मल हृदय और सच्चा लेखा माँगते हैं; धन वे उन्हीं के पास छोड़ते हैं जो उसे उनकी सेवा में लगाएँगे।

इस कथा के श्रवण का फल

शुकदेवजी ने कथा को उसके आशीर्वाद के साथ समाप्त किया।

यस्त्वेतद् भगवत ईश्वरस्य विष्णोर्वीर्याढ्यं वृजिनहरं सुमङ्गलं च ।

आख्यानं पठति शृणोत्यनुस्मरेद् वा दुष्कीर्तिं दुरितमपोह्य याति शान्तिम् ॥ ४२ ॥

yas tv etad bhagavata īśvarasya viṣṇor vīryāḍhyaṁ vṛjina-haraṁ su-maṅgalaṁ ca ākhyānaṁ paṭhati śṛṇoty anusmared vā duṣkīrtiṁ duritam apohya yāti śāntim

अर्थ: जो कोई भगवान् ईश्वर विष्णु के पराक्रम से भरे, पापहारी और परम मंगलमय इस आख्यान को पढ़ता, सुनता या स्मरण करता है, वह अपयश और पाप को दूर कर शान्ति प्राप्त करता है। (स्कन्ध 10, अध्याय 57, श्लोक 42)

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. लोभ अपना साधन स्वयं ढूँढ़ लेता है। अक्रूर और कृतवर्मा ने षड्यन्त्र कहा; शतधन्वा ने उसे किया; तीनों परिणाम से भागे। गलत इच्छा व्यक्त होते ही अपनी सेवा के लिए हाथ खोजने लगती है।
2. प्रभु की शक्ति जानना और उनकी आज्ञा मानना एक नहीं। कृतवर्मा ने माना कि राम-कृष्ण का कोई शत्रु कभी फला-फूला नहीं, और अक्रूर ने अद्भुत कर्म करने वाले प्रभु की स्तुति गाई — फिर भी दोनों ने अभी-अभी एक अपराध को बढ़ावा दिया था। भक्ति वहीं आरम्भ होती है जहाँ ज्ञान इच्छा का समर्पण बन जाए।
3. प्रभु मानवीय मर्यादा का मान रखते हैं। कृष्ण ने सत्राजित के लिए अश्रु बहाए, कुरुओं को सान्त्वना देने गए, और अपने निन्दक की सब अन्त्येष्टि क्रियाएँ करवाई। दिव्यता ने उन्हें कभी करुणा या कर्तव्य से मुक्त नहीं किया।
4. जहाँ प्रभु रहते हैं, वहाँ अमंगल टिक नहीं सकता। शुकदेवजी ने अपशकुनों की बात का संशोधन किया: मुनियों के आश्रय प्रभु का घर अरिष्टों का घर नहीं हो सकता।
5. भक्त अपने समूचे देश का मंगल है; प्रभु हृदय चाहते हैं, कोष नहीं। अक्रूर जहाँ रहे वहाँ वर्षा हुई, क्योंकि उनमें पिता का गुण था; और जब मणि ने हर सन्देह मिटा दिया, तब कृष्ण ने उसे उन्हीं को लौटा दिया। प्रभु हमारा विश्वास चाहते हैं, हमारा धन नहीं।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय में हृदय में जो बात रह जाती है, वह यह कि कृष्ण कितने धैर्य से एक ऐसा कलंक सहते हैं जो उन्होंने कभी अर्जित नहीं किया। निन्दा सत्राजित से आरम्भ हुई; हत्या उन लोगों से हुई जिन पर प्रभु की निष्ठा का ऋण था; लुप्त मणि ने बलराम तक को असमंजस में डाल दिया। हर मोड़ पर कृष्ण अपनी शक्ति से सब कुछ एक झटके में निपटा सकते थे। इसके बदले वे रोते हैं, सान्त्वना देते हैं, पीछा करते हैं, क्रियाएँ करवाते हैं, वृद्धों को सुनते हैं, और अक्रूर को आज्ञा से नहीं, मधुर वचनों से जीतते हैं। हम, जो गलत समझे जाने पर बेचैन हो उठते हैं, यहाँ से सीखें। प्रभु अपनी निर्दोषता सिद्ध करने की जल्दी नहीं करते; वे धर्म को उसका धीमा काम करने देते हैं, जब तक सत्य सबको दिख न जाए। यदि वे इतनी कोमलता से प्रतीक्षा कर सकते हैं, तो हम भी अपनी छोटी चोटों को कम ताप से थाम सकते हैं — इस विश्वास से कि सत्य एक दिन वैसे ही खुले में दिखेगा जैसे कृष्ण के हाथ में स्यमन्तक।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब आप स्वयं को गलत समझा गया अनुभव करें, तो बचाव से पहले रुकें और वह बात उन प्रभु को सौंप दें जिन्होंने स्यमन्तक खोलने की इतनी लम्बी प्रतीक्षा की। फिर यदि किसी के प्रति कोई कर्तव्य अधूरा हो — सान्त्वना का शब्द, कोई ऋण, स्मरण की कोई विधि — तो उसे आज वैसे ही निभाएँ जैसे कृष्ण ने सत्राजित के प्रति निभाया। दिन का समापन धीरे-धीरे जपते हुए करें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

यह अध्याय स्यमन्तक की लम्बी कथा को विश्राम देता है। द्वारका की एक हत्या, मिथिला तक पीछा और अकूर की वापसी के बीच कृष्ण शोक, न्याय और धैर्य के साथ तब तक चलते हैं जब तक मणि बन्धुओं के सामने खुला न रख दिया जाए और उन पर कोई छाया शेष न रहे। हम प्रभु से सीखें कि गलतफहमी को गरिमा से कैसे सहें, जीवितों और दिवंगतों के प्रति कर्तव्य कैसे निभाएँ, और स्मरण रखें कि जहाँ वे रहते हैं वहाँ कोई अमंगल सचमुच टिक नहीं सकता।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), सप्तपञ्चाशत्तम अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-57-satrajit-murdered-the-jewel-returned-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट